राजस्थान उच्च न्यायालय, जोधपुर

एस.बी. सिविल याचिका संख्या 1538/2005

डॉ. नीलिमा गोस्वामी, उम्र लगभग 34 वर्ष पत्नी डॉ. परमेश्वर गोस्वामी, पुत्री श्री रमाकांत गिरि, निवासी 142, आशा पूर्णा नगर, पाल रोड, जोधपुर।

----अपीलार्थी

बनाम

1. राजस्थान राज्य सचिव, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य विभाग, राजस्थान सरकार, जयपुर के माध्यम से।
2. निदेशक, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाएं, राजस्थान सरकार, जयपुर।
3. मुख्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अधिकारी, जोधपुर।

----प्रतिवादीगण

अपीलार्थी के लिए : श्री एम.एस. सिंघवी, वरिष्ठ अधिवक्ता,
श्री अखिलेश राजपुरोहित द्वारा सहायता प्राप्त।

प्रतिवादी के लिए :

माननीय श्री न्यायमूर्ति अरुण मोंगा

<u>आदेश (मौखिक)</u>

<u>01/04/2024</u>

1. याचिकाकर्ता की शिकायत दो आदेशों से उत्पन्न हुई है; पहला 20.01.2004 (अनुलग्नक 13) का है, जिसके द्वारा याचिकाकर्ता की सेवाएं 14.06.2001 से समाप्त कर दी गई थीं और दूसरा 16.12.2004 (अनुलग्नक 19) का है, जिसके द्वारा याचिकाकर्ता की सेवाओं की समाप्ति की पुष्टि की गई थी।

2. मामले के संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं:

2.1 दिनांक 02.06.1997 के कार्यालय आदेश के अनुसार, याचिकाकर्ता को स्थायी पद के विरुद्ध तदर्थ आधार पर चिकित्सा अधिकारी के रूप में नियुक्त किया गया था। उसने 04.06.1997 को अपना कार्यभार संभाला। 03.11.1997 को, याचिकाकर्ता ने अपनी गर्भावस्था के कारण मातृत्व अवकाश आवेदन प्रस्तुत किया। बाद में उसे

27.02.1998 को एक लड़की हुई। अपनी चिकित्सा स्थिति के कारण, उसने 30.10.1998 को फिर से छुट्टी का आवेदन प्रस्तुत किया।

2.2 हालांकि, प्रतिवादी संख्या 2 (निदेशक, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाएं) ने प्रतिवादी संख्या 3 (मुख्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अधिकारी) को 24.12.1998 को एक पत्र लिखा, जिसमें बताया गया कि याचिकाकर्ता को तदर्थ कर्मचारी के रूप में नियुक्त किया गया था। ड्यूटी से अनुपस्थित रहने के संबंध में उन्होंने याचिकाकर्ता के खिलाफ कार्रवाई करने का सुझाव दिया। दिनांक 06.01.1999 के पत्र के माध्यम से प्रतिवादी संख्या 3 ने मामले को संयुक्त निदेशक को भेज दिया। तदनुसार, संयुक्त निदेशक ने दिनांक 07.01.1999 के आदेश के माध्यम से प्रतिवादी संख्या 3 को याचिकाकर्ता के खिलाफ कार्रवाई करने के लिए कहा।

2.3 कोई भी कार्रवाई किए जाने से पहले ही याचिकाकर्ता ने 07.01.1999 को ही अपना कार्यभार संभाल लिया। उसे पदस्थापना भी दे दी गई। इसके बाद, 27.02.2001 को प्रतिवादी संख्या 3 ने एक कार्यालय आदेश जारी किया, जिसमें उसकी सेवा अवधि जिस दौरान वह अनुपस्थित रही, यानी 04.11.1997 से 30.10.1998 तक, निरस्त कर दी गई। इसके बाद याचिकाकर्ता को "पैरानॉयड शाइजोफ्रेनिया" नामक एक मनोवैज्ञानिक समस्या हो गई, जो समय बीतने के साथ बढ़ती गई। प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, जहां याचिकाकर्ता कार्यरत थी, के प्रभारी ने मामले की सूचना उच्च अधिकारियों को दी तथा उक्त रिपोर्ट के आधार पर याचिकाकर्ता को दिनांक 13.06.2001 (अनुलग्नक 11) के आदेश द्वारा प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, खारिया मीठापुर से कार्यमुक्त कर दिया गया तथा मुख्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अधिकारी, जोधपुर के कार्यालय में रिपोर्ट करने को कहा गया। तत्पश्चात याचिकाकर्ता की स्वास्थ्य स्थिति के कारण उसने टेलीग्राम के माध्यम से पुनः अवकाश आवेदन प्रस्तुत किया तथा उसके पति ने प्रतिवादी संख्या 3 को उसकी छुट्टी के संबंध में सूचित करते हुए बताया कि वह पैरानॉयड सिजोफ्रेनिया से पीड़ित है तथा मनोचिकित्सक द्वारा फिटनेस प्रमाण पत्र दिए जाने पर वह शीघ्र ही ड्यूटी पर आ जाएगी।

2.4 याचिकाकर्ता के स्वास्थ्य के कारण ड्यूटी से अनुपस्थित रहने के दौरान विभाग ने कोई कार्रवाई नहीं की और इस संबंध में पूरी तरह से चुप्पी साधे रखी, जब तक कि अचानक प्रतिवादी संख्या 3 द्वारा 20.01.2004 को आक्षेपित आदेश पारित नहीं कर दिया गया, जिसमें याचिकाकर्ता की सेवाओं को 14.06.2001 से पूर्वव्यापी रूप से समाप्त कर दिया गया। इससे व्यथित होकर याचिकाकर्ता ने 13.02.2004 को एक अभ्यावेदन प्रस्तुत किया, लेकिन कोई ध्यान नहीं दिया

गया। उसने 01.07.2004 को प्रतिवादी संख्या 3 को फिर से एक अभ्यावेदन प्रस्तुत किया।

2.5 21.08.2004 को याचिकाकर्ता को निश्चित वेतन के साथ अनुबंध के आधार पर एक नई नियुक्ति का आदेश दिया गया। उस आदेश के अनुसार याचिकाकर्ता ने 27.08.2004 को अपना कार्यभार ग्रहण कर लिया। हालाँकि, बाद में, दिनांक 16.12.2004 के आदेश द्वारा, याचिकाकर्ता की सेवाओं के पहले के समाप्ति आदेश की पुष्टि की गई थी। इसलिए यह याचिका।

3. उत्तर में बचाव इस प्रकार है:

3.1 याचिकाकर्ता ने 01.11.1997 को छुट्टी के लिए आवेदन प्रस्तुत किया, लेकिन इसे देखने से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि इसमें छुट्टी की अवधि का उल्लेख नहीं किया गया था। याचिकाकर्ता ने 03.11.1998 को ड्यूटी पर रिपोर्ट की; जबकि, उसकी प्रारंभिक नियुक्ति की तारीख 04.06.1997 थी और वह केवल 2 महीने और 5 दिन की अवधि के लिए ड्यूटी पर रही। 31.10.1998 के बाद, याचिकाकर्ता ने अपनी अनुपस्थिति या छुट्टी के बारे में कोई जानकारी नहीं दी थी; जबकि उसका बच्चा 27.02.1998 को पैदा हुआ था।

3.2 दिनांक 24.12.1998 (अनुलग्नक 5) की सूचना के माध्यम से प्रतिवादी सं. 2 ने प्रतिवादी सं. 3 को मामले में स्वयं निर्णय लेने का सुझाव दिया, क्योंकि याचिकाकर्ता की नियुक्ति जिला स्तरीय चयन समिति द्वारा की गई थी। उक्त समिति जिला कलेक्टर की अध्यक्षता में गठित की गई थी। याचिकाकर्ता को शुरू में 6 महीने की अवधि के लिए नियुक्त किया गया था, लेकिन उसने अपनी नियुक्ति का प्रारंभिक कार्यकाल भी पूरा नहीं किया।

3.3 दिनांक 06.01.1999 की सूचना के माध्यम से प्रतिवादी सं. 2 ने मामले को पूर्ण अभिलेख के साथ प्रतिवादी सं. 3 को अग्रेषित किया। दिनांक 28.01.1999 के संदेश के माध्यम से संयुक्त निदेशक ने मामले को आवश्यक कार्रवाई के लिए जिला कलेक्टर को अग्रेषित किया। दिनांक 30.01.1999 के संदेश के माध्यम से याचिकाकर्ता को प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, झखन के रिक्त पद पर पदस्थापित करने का आदेश दिया गया। दिनांक 20.01.2004 के आदेश द्वारा प्रतिवादी संख्या 3 ने याचिकाकर्ता की सेवाएँ समाप्त कर दी थीं। जिसके अनुसरण में दिनांक 16.12.2004 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ता की सेवाएँ समाप्त करने के आदेश की पुष्टि की गई थी। अतः इस न्यायालय द्वारा कोई हस्तक्षेप उचित नहीं है।

4. उपर्युक्त पृष्ठभूमि में, मैंने याचिकाकर्ता की ओर से श्री अखिलेश राजपुरोहित द्वारा सहायता प्राप्त विद्वान वरिष्ठ वकील श्री एम.एस. सिंघवी को सुना है और मामले

की फाइल का अवलोकन किया है और साथ ही प्रतिवादियों की ओर से दायर जवाब में याचिका पर दिए गए पैरावाइज जवाब को भी देखा है। प्रतिवादियों की ओर से कोई भी उपस्थित नहीं हुआ।

5. याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता की सेवाएं समाप्त करने वाला दिनांक 20.01.2004 का आक्षेपित आदेश किसी कानूनी प्राधिकार के बिना है, क्योंकि इसे केवल राजस्थान सिविल सेवा (सीसीए) नियम, 1958 के नियम 14 और 16 के साथ नियम 15 में निर्दिष्ट अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा ही पारित किया जा सकता है। याचिकाकर्ता राज्य सेवा में है/था। इस प्रकार सेवा से हटाने का आदेश केवल राज्य सरकार द्वारा ही पारित किया जा सकता है, इस तथ्य के बावजूद कि प्रारंभिक नियुक्ति आदेश मुख्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अधिकारी द्वारा जारी किया गया था।

5.1. उन्होंने आगे कहा कि आक्षेपित आदेश भारतीय संविधान के अनुच्छेद 311 के प्रावधानों का घोर उल्लंघन करते हुए पारित किया गया है। तर्कों के लिए, भले ही यह मान लिया जाए कि प्रतिवादी संख्या 3 खुद को अनुशासनात्मक प्राधिकारी मानते हुए आक्षेपित आदेश पारित कर सकता था, फिर भी इसे जांच के बाद ही पारित किया जा सकता था। बेशक, आक्षेपित आदेश पारित करने से पहले याचिकाकर्ता के खिलाफ कोई जांच नहीं की गई थी। याचिकाकर्ता को सुनवाई का कोई अवसर भी नहीं दिया गया।

5.2. उन्होंने यह भी कहा कि दिनांक 20.01.2004 का आक्षेपित आदेश पूर्वव्यापी प्रभाव से पारित किया गया है और चूंकि यह अर्ध न्यायिक/प्रशासनिक प्रकृति का है, इसलिए इसे पूर्वव्यापी प्रभाव से पारित नहीं किया जा सकता।

5.3. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता यह भी आग्रह करेंगे कि याचिकाकर्ता कभी भी जानबूझकर अनुपस्थित नहीं रही। अपनी चिकित्सा स्थिति के कारण, वह ड्यूटी पर नहीं आ सकी। उसने इसके बारे में विधिवत सूचना भी दी थी। इस प्रकार, आक्षेपित आदेश अवैधता के दोष से ग्रस्त हैं और उन्हें रद्द कर दिया जाना चाहिए।

5.4. उन्होंने यह भी कहा कि प्रतिवादियों ने 27.02.2001 को आदेश पारित करते समय गलती की है, जिसमें उनकी पिछली सेवा को अमान्य कर दिया गया है और याचिकाकर्ता को 04.02.1999 से नई नियुक्त व्यक्ति माना गया है, क्योंकि यह 04.02.1999 के आदेश के विपरीत है, जिसके तहत 04.11.1997 से 30.10.1998 तक उनकी छुट्टी मंजूर की गई थी और उन्हें 02.06.1997 के प्रथम नियुक्ति आदेश में निहित नियमों और शर्तों के अनुसार ड्यूटी पर ले जाने का आदेश दिया गया था।

तारीख	घटनाएँ
02.06.1997 (A/1)	याचिकाकर्ता को राजस्थान सरकार की सेवाओं में चिकित्सा अधिकारी के रूप में नियुक्त किया गया था।
04.06.1997	याचिकाकर्ता ने दिनांक 02.06.1997 के आदेश के अनुसार अपनी सेवाएं ग्रहण कीं।
03.11.1997 (A/2)	याचिकाकर्ता ने गर्भावस्था के कारण छुट्टी और मुख्यालय छोड़ने की अनुमति के लिए आवेदन प्रस्तुत किया।
27.02.1998	याचिकाकर्ता अपने माता-पिता के घर चली गई और शल्य चिकित्सा द्वारा एक लड़की को जन्म दिया।
31.10.1998 (A/3)	याचिकाकर्ता को पीठ दर्द की शिकायत थी, इसलिए वह वरिष्ठ चिकित्सा अधिकारी, मथानिया को आवेदन देकर 31.10.1998 को ही अपनी ड्यूटी पर आ सकी।
03.11.1998	याचिकाकर्ता ड्यूटी पर उपस्थित हुआ।
24.12.1998 (A/5)	प्रतिवादी संख्या 2 ने प्रतिवादी संख्या 3 को लिखा कि चूंकि याचिकाकर्ता की नियुक्ति तदर्थ आधार पर की गई थी और नियुक्ति जिला स्तर पर की गई थी, इसलिए प्रतिवादी संख्या 3 याचिकाकर्ता की नियुक्ति के संबंध में निर्णय लेने के लिए सक्षम है।
06.01.1999 (A/6)	प्रतिवादी संख्या 3 ने मामले को पुनः संयुक्त निदेशक, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाएं, जोधपुर को भेज दिया।
07.01.1999	संयुक्त निदेशक, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाएं, जोधपुर ने प्रतिवादी संख्या 3 को याचिकाकर्ता को वापस ड्यूटी पर लेने और छुट्टी के संबंध में निर्णय लेने का निर्देश दिया। याचिकाकर्ता ने प्रतिवादी संख्या 3 के कार्यालय में फिर से ज्वाइनिंग रिपोर्ट पेश की।
28.01.1999 (A/7)	संयुक्त निदेशक, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाएं, जोधपुर ने जिला कलेक्टर, जोधपुर को पत्र लिखकर याचिकाकर्ता को अवकाश की अवधि को अवैतनिक अवकाश मानते हुए रिक्त पद पर पदस्थापित करने की मंजूरी मांगी।
30.01.1999 (A/8)	संयुक्त निदेशक, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाएं, जोधपुर ने प्रतिवादी संख्या 3 को पुनः पत्र लिखकर याचिकाकर्ता को प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, जाखन में चिकित्सा अधिकारी के रिक्त पद पर पदस्थापित करने के लिए कहा।
04.02.1999 (A/9)	सीएमएचओ, जोधपुर ने दिनांक 30.1.1999 के संचार के अनुसरण में एक आदेश जारी किया।
07.02.1999	याचिकाकर्ता को मथानिया से कार्यमुक्त कर प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, जाखन में कार्यभार ग्रहण करा दिया गया।
2000	वर्ष 2000 के उत्तरार्ध में याचिकाकर्ता को पैरानॉयड सिजोफ्रेनिया नामक मनोवैज्ञानिक समस्या हो गई।
27.02.2001 (A/10)	प्रतिवादी संख्या 3 ने 4.11.1997 से 31.10.1998 तक की सेवा अवधि को अमान्य करने का आदेश जारी किया और याचिकाकर्ता को 4.2.1999 को नवनियुक्त माना। उक्त आदेश याचिकाकर्ता को सुनवाई का अवसर दिए बिना पारित किया गया है।
13.06.2001	याचिकाकर्ता को राजकीय प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, खारिया मीठापुर से कार्यमुक्त कर दिया गया तथा मुख्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अधिकारी, जोधपुर के कार्यालय में रिपोर्ट करने का निर्देश दिया गया।
14.06.2001	पैरानॉयड सिजोफ्रेनिया से पीड़ित होने के कारण याचिकाकर्ता मुख्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अधिकारी, जोधपुर के कार्यालय में ड्यूटी पर रिपोर्ट नहीं कर सका।
19.12.2003 (A/12)	याचिकाकर्ता के पति ने प्रतिवादी संख्या 3 को बताया कि याचिकाकर्ता पैरानॉयड सिज़ोफ्रेनिया से पीड़ित है और अब याचिकाकर्ता के स्वास्थ्य में सुधार है, इसलिए जैसे ही मनोचिकित्सक फिटनेस प्रमाण पत्र देगा, वह ड्यूटी पर रिपोर्ट करेगी।
20.01.2004 (A/13)	प्रतिवादी संख्या 3 ने याचिकाकर्ता की सेवाएं 14.6.2001 से समाप्त कर दी।
13.02.2004 (A/14 और 15)	याचिकाकर्ता ने राजस्थान सरकार के माननीय मुख्यमंत्री को एक अभ्यावेदन दिया और साथ ही अतिरिक्त निदेशक (राजपत्रित), चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाएं, राजस्थान सरकार, जयपुर को भी एक अभ्यावेदन प्रस्तुत किया।
01.07.2004 (A/16)	याचिकाकर्ता ने प्रतिवादी संख्या 3 को एक अभ्यावेदन प्रस्तुत किया।

03.07.2004 (A/17)	प्रतिवादी संख्या 2 ने तथ्यात्मक रिपोर्ट प्रस्तुत की।
21.08.2004 (A/20)	याचिकाकर्ता को चिकित्सा अधिकारी के पद पर नई नियुक्ति दी गई। यह आदेश निश्चित वेतन पर अनुबंध के आधार पर था।
27.08.2004	याचिकाकर्ता अपनी ड्यूटी पर उपस्थित हो गयी।
06.09.2004	याचिकाकर्ता को सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र, धुंधाड़ा में पुनः तैनात किया गया, जहां वह आज भी कार्यरत है।

7. उपर्युक्त विवरण से दो बातें स्पष्ट रूप से उभर कर आती हैं, अर्थात् (i) याचिकाकर्ता की योग्यता विवादित नहीं है, क्योंकि उसे बाद में एक बार फिर सेवा में शामिल किया गया था और वह तब से विभाग की संतुष्टि के अनुसार चिकित्सा अधिकारी के रूप में काम कर रही है, और (ii) मातृत्व अवकाश अवधि के बाद उसे जो चिकित्सा स्थिति और उपचार से गुजरना पड़ा, वह भी विवादित नहीं है।

8. उपर्युक्त पृष्ठभूमि में, यह देखा जाना चाहिए कि क्या विभाग ने बिना किसी अधिकृत छुट्टी के अनुपस्थित रहने के लिए याचिकाकर्ता की सेवाओं को समाप्त करने में उचित प्रक्रिया का पालन किया है।

9. विभाग का स्वीकार किया गया मामला, जैसा कि उत्तर में दिए गए बचाव से पता चलता है, यह है कि याचिकाकर्ता की सेवाओं को समाप्त करने वाले आक्षेपित आदेश बिना किसी आरोप-पत्र या कारण बताओ नोटिस जारी किए और याचिकाकर्ता को बचाव प्रस्तुत करने का अवसर दिए बिना और केवल इस आधार पर पारित किए गए थे कि केवल दो महीने और 5 दिन की सेवा के बाद, वह बिना किसी अधिकृत छुट्टी के अनुपस्थित रही। मेरी राय में, प्रतिवादियों की ओर से इस तरह की कार्रवाई प्राकृतिक न्याय और निष्पक्ष खेल के प्राथमिक सिद्धांतों के खिलाफ है, साथ ही लागू सेवा नियमों का उल्लंघन भी है।

10. मामले के तथ्य, अर्थात, याचिकाकर्ता के शुरू में मातृत्व अवकाश पर जाने के बाद उसकी अजीबोगरीब चिकित्सा स्थिति के कारण उसे पैरानोइया सिज़ोफ्रेनिया हो गया, जिसके लिए वह उपचार करवा रही थी, प्रतिवादियों के पूर्ण ज्ञान में थे। यह भी विवादित नहीं है कि याचिकाकर्ता अपनी चिकित्सा स्थिति के बारे में विभाग को बीच-बीच में टेलीग्राम भेजती रही थी।

11. यदि विभाग को याचिकाकर्ता की चिकित्सा स्थिति की वास्तविकता पर कोई संदेह था, तो वे याचिकाकर्ता को नोटिस देकर उचित कार्रवाई करने के लिए पूरी तरह से सक्षम थे।

12. इसके अलावा, यहां तक कि आक्षेपित आदेश भी पूर्वव्यापी प्रभाव से पारित किए गए थे, क्योंकि यह 20.01.2004 की तारीख का है, और याचिकाकर्ता को

बताया गया था कि उसकी सेवाएं 14.06.2001 से समाप्त कर दी गई थीं, जो कि ढाई साल से अधिक समय पहले की तारीख थी। विभाग द्वारा ऐसा कोई रास्ता नहीं अपनाया जा सकता था। यदि यह 2 वर्ष और 5 महीने की सेवा के बाद अपनी सेवाएं छोड़ने के कारण आदेश पारित होने की तिथि से उनकी सेवाओं को समाप्त करने का सरल मामला होता, तो विभाग शायद यह दावा कर सकता था कि ऐसा करना उचित था। इस विशिष्ट आधार पर, सेवाओं को पूर्वव्यापी रूप से समाप्त करने वाले आदेश को बरकरार नहीं रखा जा सकता है।

13. हालांकि, दूसरी ओर, याचिकाकर्ता को उस अवधि के लिए अनुचित लाभ भी नहीं दिया जा सकता है, जब उसने वास्तव में विभाग में सेवा नहीं की, केवल इस आधार पर कि नियुक्ति के बाद एक चरण में उसने केवल एक अवधि यानी 2 महीने के लिए सेवा की और उसके बाद ड्यूटी पर रिपोर्ट नहीं की।

14. केवल सूचना भेजने को छुट्टी की मंजूरी के रूप में नहीं समझा जा सकता है और उस सीमा तक, याचिकाकर्ता का आचरण उसके द्वारा किए गए कार्य को छोड़ने/स्वीकार करने के बराबर है, यह अच्छी तरह से जानते हुए कि अनधिकृत छुट्टी के परिणामस्वरूप स्वाभाविक रूप से उसकी सेवाओं की समाप्ति होगी।

15. ऐसा कहने के बाद, कठोर तथ्य यह है कि याचिकाकर्ता की सेवाओं की समाप्ति भारत के संविधान के अनुच्छेद 311 और प्राकृतिक न्याय और निष्पक्षता के प्राथमिक सिद्धांतों के साथ लागू विभाग के नियमों के अनुसार उचित प्रक्रिया का पालन किए बिना नहीं की जा सकती। माना कि पूर्वव्यापी रूप से उसकी सेवाएं समाप्त करने से पहले न तो कोई नोटिस जारी किया गया, न ही सुनवाई का कोई अवसर दिया गया और न ही याचिकाकर्ता के खिलाफ कोई जांच की गई।

16. इस संदर्भ में पुरुषोत्तम लाल ढींगरा बनाम भारत संघ: एआईआर 1958 एससी 36 में दिए गए निर्णय का संदर्भ लिया जा सकता है। जिसका प्रासंगिक अंश नीचे दिया गया है:

> "14. अनुच्छेद 311 में यह नहीं कहा गया है कि उस अनुच्छेद की सुरक्षा केवल उन व्यक्तियों तक ही विस्तारित है जो सेवाओं के स्थायी सदस्य हैं या जो स्थायी सिविल पद धारण करते हैं। इस अनुच्छेद के सुरक्षात्मक प्रावधानों के संचालन को इन वर्गों के व्यक्तियों तक सीमित करना अनुच्छेद में योग्यता शब्द जोड़ना होगा जो संविधान या क़ानून की व्याख्या के ठोस सिद्धांतों के विपरीत होगा। इसके बाद, अनुच्छेद 311 का खंड (2) "पूर्वोक्त व्यक्ति" को संदर्भित करता है और यह संदर्भ हमें उस अनुच्छेद के खंड (1) पर वापस ले जाता है जो "ऐसे व्यक्ति

की बात करता है जो संघ की सिविल सेवा या अखिल भारतीय सेवा या राज्य की सिविल सेवा का सदस्य है या संघ या राज्य के अधीन सिविल पद धारण करता है"। ये व्यक्ति अनुच्छेद 310(1) के अंतर्गत भी आते हैं, जिसमें उनके अलावा वे व्यक्ति भी शामिल हैं जो रक्षा सेवा के सदस्य हैं या जो रक्षा से संबंधित कोई पद धारण करते हैं। अनुच्छेद 310 भी यह उन व्यक्तियों तक सीमित नहीं है जो निर्दिष्ट सेवाओं के स्थायी सदस्य हैं या जो उल्लिखित सेवाओं से संबंधित स्थायी पद धारण करते हैं। यह मानना कि वह अनुच्छेद केवल उन व्यक्तियों पर लागू होता है जो निर्दिष्ट सेवाओं के स्थायी सदस्य हैं या जो उसमें उल्लिखित सेवाओं से संबंधित पद धारण करते हैं, यह कहना होगा कि जो व्यक्ति उन सेवाओं के स्थायी सदस्य नहीं हैं या जो उनमें स्थायी पद धारण नहीं करते हैं, वे राष्ट्रपति या राज्यपाल की इच्छा पर्यन्त अपने संबंधित पद धारण नहीं करते हैं, जैसा भी मामला हो, यह एक ऐसा प्रस्ताव है जो स्पष्ट रूप से जांच का सामना नहीं कर सकता है। हालाँकि, मामला यहीं समाप्त नहीं होता है। अनुच्छेद 311 पर आते हुए, यह स्पष्ट है कि यदि वह अनुच्छेद उन व्यक्तियों तक सीमित है जो सेवाओं के स्थायी सदस्य हैं या जो स्थायी नागरिक पद धारण करते हैं, तो खंड (1) और (2) द्वारा दिया गया संवैधानिक संरक्षण उन व्यक्तियों तक विस्तारित नहीं होगा जो किसी स्थायी पद या अस्थायी पद पर कार्य करते हैं और परिणामस्वरूप ऐसे व्यक्ति उस प्राधिकारी द्वारा बर्खास्त या हटाए जाने के लिए उत्तरदायी होंगे जिसके द्वारा उन्हें नियुक्त किया गया था या उन्हें अपना बचाव करने का कोई अवसर दिए बिना बर्खास्त, हटाया या पद में कमी किए जाने के लिए उत्तरदायी होंगे। सेवकों के बाद के वर्गों को संवैधानिक संरक्षण की उतनी ही आवश्यकता है जितनी अन्य वर्गों को है और अनुच्छेद 311 की भाषा में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह संकेत मिले कि संविधान निर्माताओं ने दोनों वर्गों के बीच कोई अंतर करने का इरादा किया था। इस तरह के अंतर के लिए कोई स्पष्ट कारण नहीं है। ऐसा कहा जाता है कि जो व्यक्ति केवल पदों पर कार्य कर रहे हैं, उन्हें पद धारण करने वाला नहीं कहा जा सकता, क्योंकि वे केवल उन पदों के कर्तव्यों का पालन करते हैं। संविधान के अनुच्छेद 58 और 66 में भी "धारण" शब्द का प्रयोग किया गया है। यह सोचने का कोई कारण नहीं है कि हमारे संविधान निर्माताओं का इरादा था कि पूर्व के खंड (2) और बाद

के खंड (4) में उल्लिखित अयोग्यता केवल उन व्यक्तियों तक विस्तारित होनी चाहिए जो मूल रूप से स्थायी पद धारण करते हैं, न कि उन लोगों पर जो अस्थायी पद धारण करते हैं और स्थायी या अस्थायी पदों पर कार्य करने वाले व्यक्ति भारत के राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के रूप में चुनाव के लिए पात्र होंगे। ऐसे किसी भी भेद का कोई तर्कसंगत आधार नहीं हो सकता। हमारे निर्णय में, जिस प्रकार अनुच्छेद 310, सेवाओं के स्थायी और अस्थायी सदस्यों के बीच या राष्ट्रपति या राज्यपाल की इच्छा पर निर्भर उनके कार्यकाल के मामले में स्थायी या अस्थायी पद धारण करने वाले व्यक्तियों के बीच कोई अंतर नहीं करता है, उसी प्रकार अनुच्छेद 311, हमारे विचार में, दोनों वर्गों के बीच कोई अंतर नहीं करता है, इसलिए दोनों ही इसके संरक्षण के अंतर्गत आते हैं और विपरीत दृष्टिकोण रखने वाले निर्णयों को सही नहीं माना जा सकता है।

15. अनुच्छेद 311 का खंड (1) बिल्कुल स्पष्ट है और इस पर चर्चा की आवश्यकता नहीं है। उस संरक्षण का दायरा और सीमा यह है कि इसमें उल्लिखित प्रकार के सरकारी सेवक उस प्राधिकारी के निर्णय के हकदार हैं जिसके द्वारा उन्हें नियुक्त किया गया था या उस प्राधिकारी से उच्चतर किसी प्राधिकारी के निर्णय के हकदार हैं और उन्हें किसी ऐसे निम्न प्राधिकारी द्वारा बर्खास्त या हटाया नहीं जाना चाहिए जिसके निर्णय में उनका वही विश्वास न हो। अंतर्निहित विचार स्पष्ट रूप से यह है कि इस तरह का प्रावधान उन्हें कार्यकाल की एक निश्चित मात्रा में सुरक्षा सुनिश्चित करेगा। खंड (2) सरकारी सेवकों को उनके संबंध में प्रस्तावित कार्रवाई के विरुद्ध कारण बताने का उचित अवसर दिए बिना बर्खास्त या हटाए जाने या पद में कमी किए जाने से बचाता है। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि खंड (1) में "बर्खास्त" और "हटाए गए" शब्दों का प्रयोग किया गया है जबकि खंड (2) में "बर्खास्त", "हटाए गए" और "पद में कमी किए गए" शब्दों का प्रयोग किया गया है। दो सुरक्षाएँ हैं (1) उस प्राधिकारी द्वारा बर्खास्त या हटाए जाने के विरुद्ध जिसके द्वारा नियुक्ति की गई थी, और (2) बिना सुनवाई के बर्खास्त, हटाए या पद में कमी किए जाने के विरुद्ध। तो फिर, उन अभिव्यक्तियों का क्या अर्थ है "बर्खास्त", "हटाए गए" या "पद में कमी"? जयंती प्रसाद बनाम उत्तर प्रदेश राज्य [एआईआर (1951) ऑल 793, 113] में कहा गया है कि ये तकनीकी शब्द हैं जिनका उपयोग उन मामलों में

किया जाता है जिनमें किसी व्यक्ति की सेवाओं को दंड के रूप में समाप्त किया जाता है। यह आग्रह किया जाता है कि वे अभिव्यक्तियाँ सेवा नियमों से ली गई हैं, जहाँ उनका उपयोग तीन प्रमुख दंडों को दर्शाने के लिए किया गया था और यह प्रस्तुत किया जाता है कि उन अभिव्यक्तियों को उसी अर्थ में पढ़ा और समझा जाना चाहिए और अनुच्छेद 13 के शब्दों के रूप में माना जाना चाहिए। यह हमें सरकारी कर्मचारियों को दिए जाने वाले दंड से संबंधित सेवा नियमों की जाँच करने के लिए प्रेरित करता है।" (जोर दिया गया)

17. सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का तात्पर्य यह है कि भारत के संविधान का अनुच्छेद 311 केवल सिविल सेवाओं के स्थायी सदस्यों या स्थायी सिविल पदों पर आसीन व्यक्तियों तक ही सीमित नहीं है। ऐसा प्रतिबंध संवैधानिक व्याख्या के सिद्धांतों के विपरीत होगा और अस्थायी या स्थानापन्न कर्मचारियों को इसके संरक्षण से अनुचित रूप से बाहर कर देगा। अनुच्छेद 311 स्थायी और अस्थायी कर्मचारियों के बीच स्पष्ट रूप से अंतर नहीं करता है। यदि अनुच्छेद 311 का संरक्षण स्थायी कर्मचारियों तक सीमित होता, तो अस्थायी कर्मचारियों को उचित प्रक्रिया के बिना बर्खास्तगी या हटाने का खतरा होता, जो अन्यायपूर्ण होता। प्रासंगिक रूप से, अस्थायी कर्मचारी भी स्थायी कर्मचारियों की तरह ही समान कर्तव्य निभाते हैं और इस प्रकार वे समान सुरक्षा के हकदार हैं। इसके अलावा, यह माना गया है कि संविधान के अन्य अनुच्छेद, जैसे अनुच्छेद 310, 58 और 66 भी स्थायी और अस्थायी पदों के बीच अंतर किए बिना "होल्ड" शब्द का उपयोग करते हैं। यदि संविधान निर्माताओं ने ऐसा कोई भेद करने का इरादा किया होता, तो उन्होंने इसे स्पष्ट रूप से कहा होता। इस प्रकार, स्थायी और अस्थायी दोनों कर्मचारियों को अनुच्छेद 311 के तहत सुरक्षा प्रदान की जानी चाहिए, क्योंकि उनके साथ अलग-अलग व्यवहार करने का कोई तर्कसंगत आधार नहीं है। सभी सरकारी कर्मचारियों के अधिकारों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के व्यापक हित में, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 311 की अधिक समावेशी व्याख्या की गई है।

18. अंत में, मैं यहाँ यह जोड़ना चाहूँगा कि प्रतिवादियों का मामला यह है कि 13/14.06.2001 को सब कुछ ठीक था, क्योंकि याचिकाकर्ता को कार्यालय आदेश द्वारा अपने कर्तव्यों में वापस आने के लिए कहा गया था और इस सीमा तक, उसके पिछले दुर्व्यवहार, यदि कोई हो, को माफ कर दिया गया था। हालाँकि, जैसा कि पता चला, याचिकाकर्ता अपनी चिकित्सा स्थिति के कारण कर्तव्यों में शामिल नहीं हुई और बिना छुट्टी के अनुपस्थित रही। याचिकाकर्ता के खिलाफ प्रशासनिक

कार्रवाई करने से प्रतिवादियों को कोई नहीं रोक सका, बशर्ते कि कानून के अनुसार उचित नोटिस जारी करके और/या विभागीय कार्यवाही को उसके तार्किक निष्कर्ष तक पहुँचाया जाए। विभाग ने अपनी इच्छा से, दो साल से अधिक समय तक कोई कार्रवाई नहीं करने का फैसला किया। फिर अचानक, जल्दबाज़ी में 20.01.2004 को आक्षेपित आदेश पारित कर दिया गया, जिसे विभाग निःसंदेह पारित कर सकता था, लेकिन जैसा कि पहले ही उल्लेख किया गया है, केवल विधि की उचित प्रक्रिया का पालन करके। इसके अलावा, यदि सेवाएं समाप्त भी की जानी थीं, तो भी, अधिक से अधिक, यह आदेश पारित होने की तिथि अर्थात 20.01.2004 से प्रभावी हो सकती थी, न कि 14.06.2001 के पूर्वव्यापी प्रभाव से। यह भी उल्लेखनीय है कि 16.12.2004 के आक्षेपित आदेश द्वारा समाप्ति की पुष्टि भी, बल्कि बहुत ही अजीब तरीके से की गई थी, क्योंकि उक्त पुष्टि आदेश पारित होने से पहले याचिकाकर्ता 21.08.2004 को ही सेवा में शामिल हो चुका था। जो भी हो, उपरोक्त अन्य कारणों से, आक्षेपित आदेश संधारणीय नहीं है।

19. उपरोक्त मेरी चर्चा के परिणामस्वरूप तथा पुरुषोत्तम लाल ढींगरा में निर्धारित अनुपात के आलोक में, उसे नई नियुक्त मानते हुए दिनांक 27.02.2001 (अनुलग्नक 10) के आदेश, दिनांक 20.01.2004 (अनुलग्नक 13) तथा 16.12.2004 (अनुलग्नक 19) के आदेश, जिनमें याचिकाकर्ता की सेवाएं समाप्त की गई थीं तथा सेवा समाप्ति के आदेश की पुष्टि की गई थी, को अपास्त किया जाता है।

20. तथापि, यह स्पष्ट किया जाता है कि याचिकाकर्ता उस अवधि के लिए किसी भी मौद्रिक लाभ की हकदार नहीं होगी, जिस अवधि के दौरान वह काम पर नहीं आई थी/ड्यूटी से अनुपस्थित रही थी। यहां अपास्त किए गए आदेशों को अपास्त करने का परिणाम केवल यह होगा कि उसे केवल उससे उत्पन्न होने वाले विचारमूलक लाभों की हकदार माना जाएगा।

21. उपर्युक्त टिप्पणियों के साथ, याचिका आंशिक रूप से स्वीकार की जाती है।

22. यदि कोई लंबित आवेदन है तो उसका भी निपटारा किया जाता है।

(अरुण मोंगा),जे

यह अनुवाद आर्टिफ़िश्यल इंटेलिजेंस टूल "सुवास" के जरिये अनुवादक की सहायता से किया गया है ।

अस्वीकरण - यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा मे अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी आधिकारिक एवं व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा एवं निष्पादन और क्रियान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।